International Journal of Arts, Humanities and Social Studies

ISSN Print: 2664-8652
ISSN Online: 2664-8660
Impact Factor: RJIF 8
IJAHSS 2025; 7(1): 52-56
www.socialstudiesjournal.com
Received: 11-01-2025
Accepted: 05-02-2025

भरत सिंह मीना
सहायक आचार्य–भूगोल, राजकीय कन्या महाविद्यालय सिकराय, दौसा, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
भरत सिंह मीना
सहायक आचार्य–भूगोल, राजकीय कन्या महाविद्यालय सिकराय, दौसा, राजस्थान, भारत

राजस्थान में जैविक कृषि प्रबन्धन की समस्या एवं संभावना

भरत सिंह मीना

DOI: https://doi.org/10.33545/26648652.2025.v7.i1a.164

सारांश
राजस्थान राज्य की कृषि उत्पादन में रसायनों के बढ़ते प्रयोग से उत्पादन में बढोतरी तो हुई है किन्तु उनकी गुणवत्ता पर विपरीत असर पड़ा है। मृदा स्वास्थ्य खराब हुआ है। जिसके फलस्वरूप मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों में व्यापक परिवर्तन आ चुका है तथा मृदा में लाभकारी सूक्ष्म जीवों की संख्या में कमी आयी है। जहरीले कृषि रसायनों के प्रयोग से पर्यावरण भी प्रदूषित हुआ है। प्रकृति में किसानों के मित्र जीवों की संख्या भी पहले की तुलना में कम हुई है। मानव स्वास्थ्य पर भी इसका विपरीत असर पडा है। उत्पादन लागत निरंतर बढती जा रही है। फलस्वरूप हमें जैविक खेती को वर्तमान परिपेक्ष्य में अपनाने की आवश्यकता महसूस हुई है। जिससे उत्पादन में स्थायित्व आने के साथ–साथ अच्छी गुणवत्ता युक्त कृषि उत्पाद लिए जा सकें। किसान स्वयं कृषि आदान तैयार कर इनका प्रयोग करें जिससे उत्पादन लागत में कमी आयें एवं मृदा में लाभकारी सूक्ष्म जीवों की संख्या में भी बढ़ोत्तरी होने के साथ–साथ इसकी उर्वराशक्ति बनी रहे। इस उद्देश्य से जैविक कृषि वर्तमान में सर्वाधिक विचारणीय एवं अनुकरणीय कदम है।

कूटशब्द : पर्यावरण, उर्वराशक्ति, कृषि, प्रकृति, स्वास्थ्य, गुणवत्ता, मृदा, रसायन, मित्र जीव

प्रस्तावना

जैविक खेती : जैविक खेती एक ऐसी पद्धति है, जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और खरपतवारनाशकों के स्थान पर जीवांश खाद जैसे पोषक तत्वों (गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, जीवाणु कल्चर, जैविक खाद आदि), जैव नाशियों (बायो–पैस्टीसाईड) व बायो एजेंट जैसे क्राइसोपा आदि का उपयोग किया जाता है। इससे न केवल भूमि की उर्वरा शक्ति लम्बे समय तक बनी रहती है, बल्कि पर्यावरण भी प्रदूषित नहीं होता और कृषि लागत घटने व उत्पाद की गुणवत्ता बढने से कृषक को अधिक लाभ मिलता है।

जैविक खेती के लाभ : जैविक खेती वह सदाबहार कृषि पद्धति है, जो पर्यावरण की शुद्धता, जल व वायु की शुद्धता, भूमि का प्राकृतिक स्वरूप बनाने वाली, जल धारण क्षमता बढ़ाने वाली, धैर्यशील कृत संकल्पित होते हुए रसायनों का उपयोग आवश्यकतानुसार कम से कम करते हुए कृषक को कम लागत से दीर्घकालीन स्थिर व अच्छी गुणवत्ता वाली सतत विकास हेतु पारम्परिक पद्धति है।

कृषि उत्पादन की दृष्टि से लाभ

1. भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि होती है।
2. सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है जिससे सिंचाई लागत कम हो जाती है।
3. रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत में कमी आती है।
4. फसलों की उत्पादकता में वृद्धि।

मिट्टी की दृष्टि से लाभ

1. जैविक खाद के उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
2. भूमि की जल धारणा क्षमता बढ़ती है।
3. भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा।

पर्यावरण की दृष्टि से लाभ

1. भूमि के जल स्तर में वृद्धि होती है।
2. मिट्टी, खाद्य पदार्थ और जमीन में रसायनयुक्त पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है।

3. कचरे का उपयोग खाद बनाने में होने से कचरा जनित बीमारियों में कमी आती है अतः स्वास्थ्य की दृष्टि से श्रेष्ठ है।
4. फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं जैविक उत्पादों की कीमत अधिक होने से किसानों की आय में वृद्धि।
5. अंतरराष्ट्रीय बाजार की प्रतिस्पर्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता का श्रेष्ठ होना।

जैविक कृषि तकनीक : जैविक खेती को समझने एवं फसल की उत्पादकता बनाये रखने के लिए इसे मुख्य रूप से दो घटकों में बाँट सकते हैं। पहला, पौधो के लिए पोषक तत्व प्रबन्धन तथा दूसरा कीडो एवं रोगों से रक्षा अर्थात् समेकित नाशीजीव प्रबन्धन ।

जैविक विधि से पोषक तत्व प्रबन्धन : पौधों को अपने जीवन चक्र को पूर्ण करने के लिए 16 प्रकार के पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इनमें कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन पौधों को पानी व हवा से मिल जाते है जबकि जस्ता, मैंगनीज, लोहा, तांबा, बोरोन, मोलीब्डेनम एवं कोबाल्ट की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। मिट्टी में कैल्शियम एवं मैग्नीशियम की प्रायः कमी नहीं पायी जाती है। अतः यदि फसल अवशेष, कम्पोस्ट, गोबर की खाद का नियमित उपयोग किया जाये तो पौधों के लिए इन तत्वों के साथ पोटाश की भी कमी नहीं रहती है। पौधों के लिए महत्वपूर्ण पोषक तत्वों में गंधक की आपूर्ति जिप्सम का उपयोग कर की जा सकती है। इसी प्रकार प्रकृति में उपलब्ध रॉक फास्फेट को खेत में डालना चाहिए। बीज को बोने से पहले पी.एस.बी/पी.एस.एम. जीवाणु खाद से उपचारित करना चाहिए। महत्वपूर्ण तत्व नत्रजन की पौधों के लिए पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता सुनिश्चित करना प्राकृतिक खेती का सबसे कठिन कार्य है, क्योंकि इस तत्व का जमीन में संचय नहीं किया जा सकता। वैज्ञानिकों के अनुसार नत्रजन की मात्रा जमीन में उपलब्ध कार्बन पर निर्भर है। जमीन में कार्बन की मात्रा तापमान पर निर्भर करती है। राजस्थान का औसत तापमान ज्यादा है। इस कारण जमीन का कार्बन जलकर, कार्बन डाइ ऑक्साइड गैस बनकर हवा में उड़ जाता है तथा जमीन में कार्बन की कमी बनी रहती है। पौधों की नत्रजन की आवश्यकता की पूर्ति निम्नलिखित तरीकों से किया जाना उपयुक्त है–

1. एक ही प्रकार की फसल हर साल नहीं उगायें। वर्ष में एक बार दाल वाली फसल अवश्य बोनी चाहिए। बाजरा, मक्का, ज्वार, तिल के बाद सर्दी में चना या मसूर बोयें। गेंहूँ, जौं, सरसों के बाद चौमासे में मूंग, मौठ, उडद, अरहर, मूंगफली बोया जाना चाहिए, क्योकि दाल वाली फसल की जड़ों में राइजोबियम की गांठे होती है। ये गांठे यूरिया की छोटी–छोटी फैक्ट्रियों का काम करती हैं।
2. फसलों के अवशेष में आधा प्रतिशत तक नत्रजन होता है, इसलिए इसका कम्पोस्ट बनाकर प्रयोग करना चाहिए। इससे पोषक तत्वों के साथ भूमि में कार्बन की मात्रा बढती है जो जमीन में नत्रजन को संचयित करने के लिए आवश्यक है।
3. पशुओं के पेशाब में भी अधिक मात्रा में नत्रजन होता है। इसका समुचित उपयोग करने के लिए पशु के बैठने के स्थान पर रॉक फास्फेट की थोड़ी मात्रा डालनी चाहिए। पशु के पेशाब में मिले हुए रॉक फास्फेट को सुपर कम्पोस्ट बनाने में काम लेना चाहिए। इससे कम्पोस्ट में नत्रजन की मात्रा में काफी बढ़ोतरी होती है।
4. उपलब्ध गोबर व कचरे से केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट) तैयार करनी चाहिए। वर्मी कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा सामान्य कम्पोस्ट के मुकाबले ज्यादा होती है।
5. ग्वार, ढेंचा, सनई की हरी खाद से जमीन में नत्रजन व कार्बन की मात्रा बढ जाती है।
6. बाजरा, ज्वार, मक्का, गेहूँ व जौ में एजेटोबैक्टर जीवाणु खाद से बीज का उपचार कर बुवाई करनी चाहिए। यह जमीन में स्वतंत्र रूप से रहकर हवा की नत्रजन को खाता रहता है और बढ़ता रहता है। कुछ समय बाद यह जीवाणु मर जाते हैं और इसके शरीर की नत्रजन कुछ समय बाद पौधों को मिल जाते हैं। इस प्रकार धान की फसल में भी एजोला का उपयोग कर हवा की नत्रजन का उपयोग संभव है।
7. नीम, अरण्डी, करंज की खलियों का उपयोग भी नत्रजन की आपूर्ति के लिए किया जा सकता है।
8. मुर्गी की बीट, भेड–बकरियों की मींगनी, हड्डी की खाद आदि का प्रयोग जमीन में पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढाता है।

जैविक खाद जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, जैव उर्वरक या जीवाणु खाद के बारे में विस्तृत विवरण निम्न प्रकार है–

1. **गोबर की खाद :** गोबर की खाद में 0.5–1.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.4–0.8 प्रतिशत फास्फोरस व 0.5–1.9 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। गोबर की खाद पशुओं के मलमूत्र व बिछावन और उनके व्यर्थ चारे व दाने का मिश्रण होती हैं। गोबर की खाद का संगठन पशु की किस्म, पशु की आयु और अवस्था, प्रयोग किया जाने वाला चारा व दाना, बिछावन की प्रकृति और उसका भंडारण आदि कारकों पर निर्भर करती है। पशुओं के गोबर, मूत्र व बिछावन आदि को गड्ढों में एकत्रित किया जाता है। गड्ढ़ों में एकत्रित गोबर खुले में होने के कारण लीचिंग तथा वाष्पशीलता के कारण पोषक तत्वों की हानि होती रहती है।
2. **कम्पोस्ट खाद :** ग्रामीण क्षेत्रों में तैयार की गई कम्पोस्ट में 0.4–0.8 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.3–0.6 प्रतिशत फॉस्फोरस तथा 0.7–1.0 प्रतिशत पोटाश पाई जाती है। विभिन्न फसलों के अवशेष, सूखे डंठल, गन्ने की सूखी पत्तियों व फसलों के अन्य अवशेषों को गड्ढों में सड़ाकर बनाई गई खाद, कम्पोस्ट खाद कहलाती है। इन अवशिष्ट पदार्थों को गड्ढों में भर दिया जाता है। गड्ढे को भरने के पश्चात् उसको मिट्टी से ढक दिया जाता है। ऐसा करने से गड्ढ़ों में सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा अपघटन की क्रिया तीव्रता से होती रहती है।
3. **वर्मी कम्पोस्ट :** वर्मी कम्पोस्ट में कुल नाइट्रोजन 0.5–1.5 प्रतिशत, उपलब्ध फॉस्फोरस 0.1–0.3 प्रतिशत व उपलब्ध सोडियम 0.06–0.3 प्रतिशत पाया जाता है। केंचुओं के अवशेष/मल, उनके कोकून सभी प्रकार के लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्व और अपचित जैविक पदार्थों का मिश्रण वर्मी कम्पोस्ट कहलाता है। सामान्यतौर पर वर्मी कम्पोस्ट केंचुओं के अवशेष/मल को कहते हैं। उपयुक्त तापमान, नमी, हवा एवं जैविक पदार्थ मिलने पर केंचुए मिट्टी को खाकर उसको मल के रूप में पाचन के उपरान्त बाहर निकालते रहते हैं। ऐसा अनुमान है कि 2000 केंचुए एक वर्ग मीटर जगह की मिट्टी खाकर एक वर्ष में 100 मिट्रिक टन ह्यूमस का निर्माण करते हैं।
4. **हरी खाद :** कार्बनिक खेती में हरी खाद का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। हरी खाद वाली फसलें भूमि में उगाकर कोमल अवस्था में बुवाई के 30–35 दिन बाद, गिराकर दबा दी जाती हैं। सड़ने और गलने के पश्चात् इन फसलों से भूमि के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में सुधार होता है। भूमि में वायु संचार व पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है तथा भूमि कटाव पर भी नियंत्रण होता है। सनई, ढेंचा, ग्वार, मूंग, लोबिया आदि फसलें हरी खाद के रूप में प्रयोग की जाती है। ऐसा अनुमान है कि हरी खाद की विभिन्न फसलों लोबिया, उडद, मूंग, ग्वार, ढेचा, बरसीम, मटर आदि से

75–150 किलो नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर की दर से भूमि को प्राप्त होती है।

5. **जैव उर्वरक या जीवाणु खाद** : जैव उर्वरक ऐसे प्राकृतिक जीवाणुओं का समूह है, जिनकों लिग्नाइट धारक के माध्यम से वैज्ञानिक विधियों द्वारा तैयार कर पोलीथीन की थैलियों में बन्द कर कृषकों को बीज उपचार हेतु उपलब्ध कराया जाता है। ये जीवाणु वायुमण्डल तथा भूमि में विद्यमान निष्क्रिय तथा अघुलनशील तत्वों को उपयोग योग्य बनाकर पौधों को उपलब्ध कराने में समर्थ होते हैं। ये जीवाणु सस्ते तथा सब प्रकार से हानि रहित होते हैं। इस जीवाणु खाद से बुवाई से पूर्व बीजों को उपचारित किया जाता है। जिससे कि पौधों की जड़ों के आस–पास तथा भूमि में इन विशेष जीवाणुओं की संख्या प्रचुर मात्रा में हो जाये। जीवित व सक्रिय मृदा वही कहलाती है जिसमें अधिक से अधिक जीवांश हों। जैव उर्वरक अपनी उपापचयी क्रियाओं के फलस्वरूप स्रावित होने वाले विभिन्न एण्टीबायोटिक्स, विटामिन्स एवं हार्मोन्स जैसे इन्डोल एसीटिक एसिड (IAA), साइटोकाइनिन, जिब्रेलिन आदि का स्राव कर पौधो की वृद्धि एवं विकास में सहायता करते हैं। जैव उर्वरक पराक्रम्य शक्ति स्रोत के साथ–साथ पर्यावरण मित्र भी होते हैं। ये जीवाणु मिट्टी में उपस्थित अविलेयकारी अकार्बनिक यौगिकों को विलेयकारी कार्बनिक यौगिकों में परिवर्तित कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। साथ ही ये कम आण्विक भार वाले यौगिक (साइड्रोफोर) का स्राव भी करते हैं जो एक लौह अवशोषक पदार्थ हैं। रासायनिक उर्वरकों के लगातार प्रयोग से बांझ होती मृदा में पुनः उपजाऊ शक्ति लौटाने के लिए अब जैविक उर्वरकों को प्रयोग के तौर पर अपनाया जाने लगा है।

जीवाणु खाद के प्रकार

1. नाइट्रोजन योगीकरण वाले
- दलहनी फसलें – राइजोबियम जीवाणु
- अन्य फसलें – एजोटोबैक्टर, ऐजोस्पाईरिलम, एसीटोबैक्टर जीवाणु आदि।
- चावल/धान – नीली हरी अनोला जीवाणु

2. फास्फोरस घुलनशीलता के लिए–एसपजिलस, पैनिसिलियम, स्यूडोमोनॉस, बैसिलस आदि
3. पोटाश व लोहा घुलनशीलता के लिए–बैस्लिम, फ्रैच्यूरिया, एसीटोबैक्टर आदि
4. प्लांट ग्रोथ प्रमोटिंग राइजोबैक्टीरिया–बैस्लिम, फ्लोरिसैंट, स्यूडोमोनॉस, राइजोबियम, फैवोबैक्टीरिया
5. माइकोराइजल कवक–एक्टोमाइकोराइजा तथा अव स्कुलर माइकोराइजा

जैविक विधि से कीट रोग प्रबन्धन : खेती में लगातार अधिक रसायनों के प्रयोग से जमीन जहरीली हो चुकी है। पर्यावरण के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य पर इनका बुरा प्रभाव पड़ रहा है। जहरीले व महंगे रासायनिक कीटनाशकों व रोग नियंत्रकों के लगातार प्रयोग से किसान कर्जे के बोझ से दबकर आत्महत्या करने को मजबूर हो रहे हैं। इस दुष्चक्र से किसानों को बाहर निकालने के लिए जरूरी है कि वे खेती में जैविक विकल्पों को अपनाये। जैविक कीटनाशक रोग व कीट को कम या खत्म करने के साथ–साथ जमीन की उर्वरता भी बढ़ाते हैं। यह हमारे आस–पास के प्राकृतिक संसाधनों द्वारा अपने हाथों से तैयार होते हैं। इनसे किसानों की बाजार पर निर्भरता भी खत्म होती है। किसानों के द्वारा प्रयोग किया कुछ सरल एवं जांचे परखे तरीकों का प्रयोग कर खेती में रोगों व कीटों से होने वाले नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है। समन्वित कीट रोग प्रबन्धन के अन्तर्गत मित्र कीटों, मित्र फफूंदों, मित्र पक्षियों, जैविक कीटनाशियों, गौ–मूत्र, नीम आधारित कीटनाशियों का उपयोग नाशीजीवों का प्रकोप फसलों की आर्थिक हानि स्तर को कम करने के लिए किया जाता है। इन नाशी जीव प्रबन्धन को प्रमुखतया निम्न विधियों द्वारा किया जा सकता है–

1. कृषिगत नियंत्रण
2. यांत्रिक नियंत्रण
3. जैविक नियंत्रण
4. स्वीकार योग्य वनस्पतिक अर्क या कुछ रसायन जैसे– कॉपर सल्फेट, सॉफ्ट सोप आदि द्वारा।

1. **कृषिगत नियंत्रण** : रोग रहित बीज तथा प्रतिरोधी प्रजातियाँ जैविक जीवनाशी प्रबन्धन में सबसे अच्छी बचाव विधि है। जैव विविधता का रख–रखाव, प्रभावी फसल चक्र, बहुफसल, कीटों के प्राकृतिकवास में बदलाव तथा ट्रैप फसल का प्रयोग भी प्रभावी विधियाँ है जिससे नाशी जीवों की संख्या को नियंत्रित रखा जा सकता है।
2. **यांत्रिक नियंत्रण** : रोग प्रभावित पौधे तथा रोग ग्रस्त भाग को अलग हटाना। अंडा तथा लार्वा समूहों को इकट्ठा करके नष्ट करना, चिड़ियों के बैठने के स्थान की स्थापना जैसे प्रकाश पिंजरा, चिपचिपी रंगीन पट्टी तथा फेरोमैन ट्रैप्स आदि नाशी जीव नियंत्रण की सबसे अधिक प्रभावशाली विधियाँ हैं।
3. **जैविक नियंत्रण** : नाशी जीवों का भक्षण करने वाले जीव–जन्तु तथा रोधी प्रजातियाँ नाशी जीव नियंत्रण में सबसे अधिक प्रभावी सिद्ध हुई हैं। ट्राइकोग्रामा 40–50 हजार अंडे/हैक्टेयर, चौलोनस ब्लेकबर्नी (chelonus blackburni) 15–20 हजार अंडे/हैक्टेयर, एपानटेलिस (Apanteles) के 15–20 हजार अंडे तथा क्राइसोपरला (chrysoperll) के 5 हजार अंडे/हैक्टेयर बुवाई के 15 दिन बाद तथा नाशी जीवों का भक्षण करने वाले जीव–जन्तु तथा अन्य परजीवी बुवाई के 30 दिन बाद प्रयोग करने से जैविक खेती में नाशी जीव समस्या का नियंत्रण प्रभावशाली ढंग से होता है।

बहुत से वृक्ष कीटनाशी गुणों के कारण जाने जाते हैं। ऐसे वृक्षों की पत्तियों या बीजों का सत्/अर्क नाशीजीवों के प्रबन्धन में प्रयोग किया जा सकता है। अनेक प्रकार के वृक्ष व पौधे इस उद्देश्य से चिन्हित किये गये हैं, जिनमें नीम सर्वाधिक प्रभावशाली पाया गया है। विभिन्न रोगों व कीटों के नियंत्रण हेतु कुछ उपयोगी व सरल तरीके निम्नवत् हैं–

- **नीम की पत्तियाँ** : एक एकड़ जमीन में छिड़काव के लिए 10–12 किलो पत्तियों का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग कवक जनित रोगों सुंडी, माहू इत्यादि हेतु अत्यन्त लाभकारी होता है। 10 लीटर घोल बनाने के लिए 1 किलों पत्तियों को रातभर पानी में भिगो दिया जाता है। अगले दिन सुबह पत्तियों को अच्छी तरह कूटकर या पीसकर पानी में मिलाकर पतले कपडे से छान लेते हैं। शाम को छिडकाव से पहले इस रस में 10 ग्राम देसी/सामान्य साबुन घोल लेते हैं।
- **नीम की गिरी** : नीम की कुटी हुई गिरी को एक पतले कपड़े में बांधकर रातभर 20 लीटर पानी में भिंगो देते हैं। इस पानी में 20 ग्राम देशी साबुन या 50 ग्राम रीठे का घोल मिला देंगें। इस घोल को कीट व फफूंद नाशक के रूप में प्रयोग किया जाता है।
- **नीम का तेल** : नीम का तेल का 1 लीटर घोल बनाने के लिए 15 से 30 मि.ली. तेल को 1 लीटर पानी में अच्छी तरह घोलकर इसमें 1 ग्राम देशी साबुन या रीठे का घोल मिलाते हैं। नीम के तेल के छिडकाव से गन्ने की फसल में तना बंधक व सीरस बंधक बीमारियों को नियंत्रित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त नीम का तेल कवक जनित रोगों में भी प्रभावी है।

- **नीम की खली कवक (फफून्दी)** : कवक (फफून्दी) व मिट्टी जनित रोगों के लिए एक एकड़ खेत में 40 किलो नीम की खली को पानी व गौमूत्र में मिलाकर खेत की जुताई करने से पहले डालते हैं।
- **डैकण (बकायन)** : यह नीम की जाति का ही पेड है। नीम से छोटा व अचिरस्थाई होता है। इसके पत्ते व फल कड़वे नीम के समान तथा आकार में कुछ बडे होते हैं। पहाडों में नीम की जगह डैकण को प्रयोग में ला सकते हैं। एक एकड के लिए डैकण की 5 से 6 किलोग्राम पत्तियों की आवश्यकता होती है। नीम या डैकण पर आधारित कीटनाशकों का प्रयोग हमेशा सूर्यास्त के बाद करना चाहिए क्योंकि सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों के कारण इसके तत्व नष्ट होने का खतरा होता है।
- **करंज (पोगम)** : करंज फलीदार पेड है जो खाने में विशाक्त व उपयोगी कीट प्रतिरोधक व फफूंदी नाशक है। करंज के तेल, पत्तियों, गिरी व खल का घोल बनाने के लिए मात्रा व छिडकाव की विधि भी नीम की तरह है।
- **गोमूत्र** : गोमूत्र कीटनाशक के साथ–साथ पोटाश व नाइट्रोजन का प्रमुख स्रोत है। इसका ज्यादातर प्रयोग फल, सब्जी तथा बेलवासी फसलों को कीड़ों व बीमारियों से बचाने के लिए किया जाता है। गोमूत्र को 5 से 10 गुना पानी के साथ मिलाकर छिड़कने से माहू, सैनिक कीट व शत्रु कीट मर जाते हैं।
- **लहसुन** : मिर्च, प्याज आदि की पौध में लगने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए लहसुन का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए 1 किलो लहसुन तथा 100 ग्राम देसी/सामान्य साबुन को कूटकर 5 ली. पानी के साथ मिला देते हैं व फिर पानी को छानकर इसका छिड़काव करते हैं।
- **चुलू व सरसों की खली** : यह बहुत ही प्रभावकारी फफून्दी नियंत्रक है। एक एकड में 40 किलो चुलू व सरसों की खली को बुवाई से पहले खेतो में डालते हैं।
- **खट्टा मठ्ठा** : यह बहुत ही प्रभावकारी फफून्द नियंत्रक है। एक सप्ताह पुराने 2 लीटर खट्टे मट्टे का 30 लीटर पानी में घोलकर इसका खड़ी फसल पर छिडकाव करना चाहिए।
- **तम्बाकू व नमक** : सब्जियों की फसल में किसी भी कीट व रोग की रोकथाम के लिए 100 ग्राम तम्बाकू व 100 ग्राम नमक को 5 ली. पानी में मिलाकर छिड़कना चाहिए।
- **शरीफा तथा पपीता** : शरीफा व पपीता कीट व रोगनाशक हैं। यह सुंडी को बढने नहीं देते। इसके एक किलोग्राम बीज या तीन किलोग्राम पत्तियों व फलों के चूर्ण को 20 ली. पानी में मिलाएँ व छानकर छिडक दें।
- **मिट्टी का तेल** : रागी (कोदा) व झंगोरा (सांवा) की फसल पर जमीन में लगने वाले कीड़ो के लिए मिट्टी के तेल में भूसा मिलाकर बारिश से पहले या तुरंत बाद जमीन में इसका छिडकाव करेगें। इससे सभी कीडे मर जाते हैं। इसका धान की फसल में सिंचाई के स्रोत पर 2 ली. प्रति एकड़ की दर से मिट्टी का तेल डालने से भी कीड़े मर जाते हैं।
- **जैविक घोल** : परम्परागत जैविक घोल के लिए डैकण व अखरोट की दो–दो किलो सूखी पत्तियाँ, चिरैता के एक–एक किलो, टेमरू व कड़वी की आधा–आधा किलो पत्तियों को 50 ग्राम देसी/सामान्य साबुन के साथ कूटकर पाउडर बनाएँ। जैविक घोल तैयार करें। इसमें जब खूब झाग आने लगे तो घोल प्रयोग के लिए तैयार हो जाता है। बुवाई के समय से पहले व हल चलाने से पूर्व इस घोल को छिड़कने से मिट्टी जनित रोग व कीट नियंत्रण में मदद मिलती है।
- **पंचगव्य** : पंचगव्य बनाने के लिए 100 ग्राम गाय का घी, 1 ली. गौमूत्र, 1 ली. दूध तथा 1 किलो ग्राम गोबर व 100 ग्राम शीरा या शहद को मिलाकर मौसम के अनुसार चार दिन से एक सप्ताह तक रखें। इसे बीच–बीच में हिलाते रहें। उसके बाद इसे छानकर 1:10 के अनुपात में पानी के साथ मिलाकर छिडकते हैं। पंचगव्य से सामान्य कीट व बीमारियों पर नियंत्रण के साथ–साथ फसल को आवश्यक पोषक तत्व भी उपलब्ध होते हैं।
- **गाय के गोबर का घोल** : गाय के गोबर का सार बनाने के लिए 1 किलो गोबर को 10 ली. पानी के साथ मिलाकर टाट के कपडे से छानें। यह पत्तियों पर लगने वाले माहू, सैनिक कीट आदि हेतु प्रभावी हैं।
- **दीमक की रोकथाम** : गन्ने में दीमक रोकथाम के लिए गोबर की खाद में आडू या नीम के पत्ते मिलाकर खेत में उनके लड्डू बनाकर रखें। बुवाई के समय एक एकड खेत में 40 किलो नीम की खल डालें। नागफनी की पत्तियाँ 10 किलो, लहसुन 2 किलो, नीम के पत्ते 2 किलो को अलग–अलग पीसकर 20 लीटर पानी में उबाल लेगें। ठंडा होने पर उसमें 2 लीटर मिट्टी का तेल मिलाकर 2 एकड जमीन में डालें। इसे खेत में सिंचाई के समय डाल सकते है।
- **चूहों का नियंत्रण** : कच्चे अखरोट के छिलके निकालकर उन्हें बारीक पीसकर चटनी बना लें। इस चटनी के साथ आटे की छोटी–छोटी गोलियों को फसल के बीच–बीच व चूहे के बिलों में रखें। चूहे यह गोलियाँ खाने से मर जाते हैं। इसके अतिरिक्त देशी पपीते के छिलके या घोडे या खच्चर की लीद को चूहों के बिलों के पास व खेतों में डालने से चूहे भाग जाते हैं या मर जाते हैं।
- **जैविक बाड** : कीटों व रोगों पर नियंत्रण हेतु खेतों में औषधीय पौधों की बाड़ भी कारगर साबित होती है। खेतों की मेढ़ों पर गेदें के फूल व तुलसी के पौधों अथवा डैकण के पेड, तेमरू, निर्गुण्डी (सिरोली, सिवाली), नीम, चिरैता व कडवी की झाड़ियों की बाड़ लगाये।
- **फेरोमैन ट्रेप का प्रयोग** : फेरोमैन ट्रैप एक कार्बनिक रसायन (गंध) है जिसको मादा पतंगा नर पतंगा को मिलन हेतु आकर्षित करने के लिए वातावरण में छोड़ती है और पतंगा आकर्षित होकर ट्रैप्स के जाल में फंस जाता है। फेरोमैन ट्रैप्स को दो प्रकार से प्रयोग किया जाता है–प्रथम–कीटों का मूल्यांकन करने हेतु, द्वितीय–अधिक मात्रा में नर पतंगों को आकर्षित करके नष्ट करने हेतु। कीट का मूल्यांकन करने के लिए दो फेरोमैन ट्रेप्स प्रति हैक्टेयर में लगाये जाते हैं, जबकि नर पंतगों के नियन्त्रण के लिए 5–6 ट्रेप्स प्रति हैक्टेयर आवश्यक होते हैं।
- **ट्राईकोडर्मा (मित्र फफूंद)** : फसलों में लगने वाले जड़ गलन, उखटा एवं तना गलन आदि भौम जनित फफूंद रोगों की रोकथाम के लिए जैविक दवा ट्राईकोडर्मा नामक मित्र फफूंद उपयोगी है। इससे बीजोपचार, जड़ोपचार अथवा मृदा उपचार करने से फसलों की जड़ों के आस–पास इस मित्र फफूंद की भारी संख्या कृत्रिम रूप से निर्मित हो जाती है। ट्राइकोडर्मा मृदा में स्थित रोग उत्पन्न करने वाली हानिकारक फफूंद की वृद्धि रोककर उन्हें धीरे–धीरे नष्ट कर देती है जिससे ये हानिकारी फफूंदी फसलों की जडों को संक्रमित कर रोग उत्पन्न करने में असमर्थ हो जाती है।

जैविक कृषि की संभावनाएँ : राजस्थान में लगभग 70 प्रतिशत छोटी जोत वाले सीमित साधन वाले किसान हैं। वे जैविक खेती को अपनाकर कम लागत में अधिक गुणवत्ता वाले खाद्यान्नों का उत्पादन कर सकते हैं। किसान इन तरीकों को अपनाकर

गुणवत्ता के साथ–साथ अधिकतम लाभ कमा सकते हैं। राजस्थान में सिंचित क्षेत्र काफी सीमित है और अधिकांश कृषि क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है तथा वर्षा भी अनियमित व अनिश्चित है। जैविक खेती में सूखे क्षेत्रों में खेती के लिए कम लागत वाली सरल प्रौद्योगिकियाँ विकसित की गई हैं। इन प्रौद्योगिकियों का इस्तेमाल से जहाँ एक ओर उत्पादकता में वृद्धि होगी वहीं दूसरी ओर उत्पादन कायम रहने से सूखी भूमि की खेती से जुड़े किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने में मदद मिलेगी, जो क्षेत्र का निर्धनतम समुदाय है। जैविक पद्धति से सरसों व चना की फसल में लगने वाले कीट, खरपतवार व रोग से सुरक्षा मिलेगी, वहीं उपज में इजाफा होगा। प्रयोग के तौर पर राजस्थान में जैविक कृषि को बढावा देने के लिए वर्ष 2016–17 में जैविक खेती कलस्टर योजना तैयार की गई है, जिसके तहत क्षेत्र में 28 कलस्टर चयन किया गया है। प्रत्येक कलस्टर में करीब एक एकड जमीन है।

इसमें जिला स्तर पर एक ब्लॉक में जैविक खेती करने वाले किसानों को प्रोत्साहित किया जाएगा और सामूहिक रूप से जैविक खेती की जाएगी। इसके लिए चरणबद्ध तरीके से तीन साल तक अनुदान भी दिया जाएगा। जैविक खेती के लिए प्रति हैक्टेयर 20 हजार रूपये का अनुदान दिया जाएगा। इसके अलावा राष्ट्रीय बागवानी मिशन एवं फलोद्यानिकी के तहत आठ हजार रूपये प्रति हैक्टेयर का अनुदान दिया जाएगा। जैविक खेती का श्रेष्ठ उत्पादन करने पर तीन किसानों को एक–एक लाख रूपये का पुरुस्कार भी दिया जाएगा। राजस्थान में कृषकों द्वारा सरसों में चौपा, खरपतवार लगने पर उसकी रोकथाम के लिए ग्रीन लसरिंग, लेडीज वर्ड विरल दवा उपयोग कर चौंपा को खत्म किया जा रहा है। सरसों में सफेद तनासडन, पादप गलन के लिए ट्रायकोडरमा व बीटी दवा उपयोग में ले रहे हैं। चने में लट (गिंडार) लगने पर एनपीवी जैविक का छिडकाव करते हैं और नीम आधारित दवाएँ भी देते हैं। इससे कृषकों की उपज में पाँच प्रतिशत इजाफा हुआ है।

निष्कर्ष

विभिन्न कृषि रसायनों के कृषि पारिस्थितिकी पर हो रहे हानिकारक व विनाशकारी प्रभावों के कारण अध्ययन क्षेत्र के कुछ कृषक रासायनिक कृषि के स्थान पर जैविक कृषि की ओर अग्रसर हुए हैं और रासायनिक कृषि के स्थान पर जैविक कृषि से कई गुना अधिक लाभ भी अर्जित कर रहे हैं। जैविक कृषि पर किये गये सर्वेक्षण से पता चला है कि जैविक विधि से कुल उत्पादन में 9.2 प्रतिशत की कमी परन्तु उत्पाद की कीमत में 22 प्रतिशत का लाभ प्राप्त होता है। जिसका मुख्य कारण उत्पाद की 20–40 प्रतिशत अधिक आर्थिक मूल्य वृद्धि तथा 11.7 प्रतिशत फसल पर लगने वाले खर्च में कमी आना है। अध्ययन क्षेत्र में जैविक कृषि की सम्भावनाएँ काफी उज्ज्वल है तथा यह तब और अधिक प्रभावशाली हो सकती है, जब सरकार जैविक खेती करने वालों को प्रमाणीकृत खाद स्वयं के संस्थानों से सब्सिडी पर उपलब्ध करवाए तथा चार साल के लिए आमदनी की गारंटी का बीमा की व्यवस्था प्रारम्भिक सालों में होने वाले घाटे की क्षतिपूर्ति करे। सरकार को पशुपालन को बढ़ावा देना चाहिए, जिससे किसान जैविक खाद के लिए पूरी तरह बाजार पर आश्रित न रहे। तत्कालिक आवश्यकता यह है कि प्राथमिकताओं में परिवर्तन लाया जाए और सब्सिडी को रासायनिक कृषि से जैविक कृषि की ओर मोड़ा जाए। कृषकों को प्रोत्साहित व प्रशिक्षित करना चाहिए कि वे जैविक कृषि अभ्यासों की ओर बढ़ें तथा इस प्रकार अपनी आजीविका में वृद्धि करें एवं रसायनों के खतरे से जीवन की रक्षा करें, जो किसान पहले से रासायनिक खेती कर रहे हैं वे जैविक खेती अपनाकर एकीकृत प्रबन्धन कर सकते हैं। किसान इन तरीकों को अपनाकर गुणवत्ता के साथ–साथ अधिकतम लाभ कमा सकते हैं। ऐसा करने से वे कम लागत में अधिक गुणवत्ता वाले खाद्यान्नों का उत्पादन कर सकते हैं। इसके साथ–साथ जैविक खेती द्वारा पारिस्थितिक तंत्र का संरक्षण तथा संतुलन आसानी से बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. सिंह, छिद्दा (1983) : "खरीफ फसलों की वैज्ञानिक खेती एवं फसल पारिस्थितिकी", भारती भारत प्रकाशन, मेरठ।
2. मोघे, बसन्त एवं माथुर सी.एम. (1984) : "राजस्थान की मृदाएँ एवं उनका प्रबन्ध", राजस्थान हिन्दी अकादमी, जयपुर।
3. सिंह, छिद्दा (1984) : "रबी फसलों की वैज्ञानिक खेती एवं शस्य विज्ञान के सिद्धान्त", भारती भारत प्रकाशन, मेरठ।
4. यादव, डॉ. सत्यवीर (1996) : "कृषि पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण नियोजन", राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. कुमार, संजीव (नवम्बर 2011) : "मृदा गुणवत्ता", कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका।
6. जयपाल, मलिक सिंह (नवम्बर 2011) : "मृदा उर्वरता प्रबन्धन", कुरूक्षेत्र, मासिक पत्रिका।
7. मीना, कन्हैया लाल (2014) : "अलवर जिले की कृषि पारिस्थितिकी तंत्र पर कीटनाशक एवं उर्वरकों का प्रभाव, एक भौगोलिक अध्ययन", शोध प्रबंध, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।
8. कृषि विभाग, राजस्थान, जयपुर (2015) : "जैविक खेती एक परम्परागत कृषि पद्धति"
9. राजस्थान पत्रिका (01 सितम्बर 2019) : "खेती की लहर, कैंसर का कहर", प्रकाशित लेख।
10. द्विवेदी, अनुप कुमार सिंह, आर. के. भारद्वाज, रेशु (अंक 2. 2019) : "आधुनिक खेती व कृषि क्षेत्र में कृषि रसायनों के बढते दुष्प्रभाव का पर्यावरण पर प्रभाव", विंध्य कृषि पत्रिका, कृषि विज्ञान केन्द्र, मीरजापुर।
11. www.krishirajasthan.gov.in
12. www.krishijagran.com
13. www.statisticsrajasthan.gov.in
    www.vikaspidia.in